प्र क र ण - २

डा. वर्मा के एकांकी कला सम्बन्धी विचार

" एकांकी कबीर द्वारा इंगित घूंघट का पट है, जिसके खोलने पर राम मिल जाते हैं । यह तीव्र अनुभूति सत्य के यथार्थ तथा आदर्श को उसी प्रकार छिपाएं रहती है जैसे हंसी या आंसू जीवन के दुःख या सुख के समस्त संसार को अपने में लीन किये रहते हैं । मेरे सामने एकांकी की कल्पना वैसे ही है जैसे - एक तितली फूल पर बैठ कर उड़ जाएं । "

" अनुराज " डा. रामकुमार वर्मा ।

" डा. वर्मा के एकांकी कला सम्बन्धी विचार "

ऐतिहासिक प्रसंगों के पुष्पों को शब्दों के तारों में पिरो कर माला तैयार करने वाला लेखक किसी सच्चे चित्रकार की भांति भूतकालीन पात्रों को साहित्य पृष्ठ पर अपनी लेखनी कूंची द्वारा सजीव बना देता है। इसी में लेखक की असाधारण लेखन कला का कौशल छिपा रहता है। भूत को वर्तमान में जीवित करना तथा पाठकों के मन में उसकी स्पष्ट छवि तराशना अत्यन्त ही कठिन काम है। लेखक की वह शक्ति भगीरथ पुरुषार्थ द्वारा अविरल साधना के परिपाक स्वरूप पायी जाती है।" १

डा. रामकुमार वर्मा हिन्दी एकांकी के जन्मदाताओं में से हैं। वे एक ओर ललित कल्पना के कवि हैं तो दूसरी ओर विचारक एवं आलोचक। ऐसा कवि जब विचारक एवं आलोचक होने लगता है तो उसे सूक्ष्म यथातथ्य के अंकन के प्रति मोह हो जाता है, तथा यह मोह उसे मूर्त चित्रण की ओर प्रेरित करता है। ऐसी स्थिति में कांट-छांट आरम्भ हो जाती है। भावोल्लास तथा कल्पना का वैभव सिमटकर जैसे - रेखाओं में संकुचित होने का प्रयत्न करने लगता है। कवि रामकुमार वर्मा ने निशीथ से रूपराशी " होते हुए। चित्ररेखा तथा चन्द्रकिरण तक इसी लीक पर चलकर यात्रा तय की है। इसके बाद उनके स्फुट रेखा चित्र तथा एकांकी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि कवि अब कल्पना जगत की उन्मुक्त उड़ाने छोड़ कर मानव जीवन की कुंठा तथा अवसाद की गांठे खोलना व स्पष्ट करना अपना कर्तव्य समझने लगा है।

बादल की मृत्यु " नामक एकांकी जो १९३० में " विश्वामित्र " में प्रकाशित हुआ था, यही उनकी एकांकी विषयक प्रेरणा को उद्बोधित करता है। इसमें कल्पना जनित परिस्थिति प्रकृति के क्षेत्र में, कविता की व्यंजना पूर्ण शैली में, गद्य का परिधान

---

१. नर्तकी व्यलोसा (हिन्दी अनुवाद) पंडित जनक विजयपाणी।

लेकर अवतरित हुई हैं । वर्मा जी के एकांकी संग्रहों के क्रम में उसके पश्चात " दस मिनट " नहीं का रहस्य, चंपक, रेशमी टाई । आदि गुंफित होते रहे । इन सभी में मनोवैज्ञानिक संबन्धों का सूक्ष्म चित्रण किया गया है उतना समिष्ट रूप से हिन्दी साहित्य में नवीन दृष्टिकोण का प्रादुर्भाव कर सका है । निराशाजनक परिस्थितियों के चित्रण में वर्माजी सिद्ध-हस्त हैं । उनके अधिकांश नाटक दुखान्त होकर, जीवन की एक चिरन्तन एवं सर्वकालीन करुणा के कणों से अभिसिक्त हैं । आलोच्य एकांकी एवं नाटककार के स्वभाव से ही सौन्दर्य शिल्पी होने के कारण उनकी कला जीवन की एक विशेष स्तर को छू कर मन में एक कोमल विह्वलन पैदा कर देती है यही उनकी सफलता का रहस्य है । यहां पर डा. वर्मा के एकांकी कला संबंधी विचारों पर दृष्टिपात करना अप्रासंगिक न होगा ।

डा. वर्मा एवं इतिहास :--

आलोच्य एकांकी एवं नाटककार की रचनाओं की अनेक दिशाएं हैं, जिनमें इतिहास के विविध पार्श्व उद्घाटित हुए हैं । राजनीति ,धर्म, समाज, तथा जन जीवन को अधिकतर विदेशी विद्वानों ने हेय बद्ध किया है । जिसमें उन्होंने भारत एवं भारतवासियों को अज्ञानता के परिवेश में आबद्ध सिद्ध किया है । इसके विपरीत हमारे कवियों ने अपने समकालीन महापुरुषों के जो चित्र प्रस्तुत किये हैं उसमें से जो अतिश्योक्ति का भाग घटा देने पर जो सत्यांश प्राप्त है, वह हमारे इतिहास के नव-निर्माण में सहायक है, यही सत्यांश डा.वर्मा के नाटकों की आधार शिला है ।

डा. वर्मा के मत में जितना सत्य इतिहास ने सुरक्षित किया है उतने सत्य से प्रतिफलित घटना या व्यक्ति की क्रियाशीलता का रूप स्पष्ट नहीं होता । ऐसा प्रतीत होता है कि जादूगर की तरह इतिहासकार ने सन् संवत को मुट्ठी में बन्द कर काल क्रम के जादू का डंडा घुमाया और धूल से रूपया बना दिया । [१] सत्य कथा क्या थी?कितनी

---

१. इतिहास के स्वर - भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा ।

समय के प्रवाह में बह गयी, इस सम्बन्ध में इतिहास व इतिहासकार दोनों मौन ही रहते हैं ।

जिस रात सिद्धार्थ ने महा निष्क्रमण किया, उससे पूर्व दिन में उन्होंने क्या-क्या किया होगा ? यशोधरा से भी कोई बात की होगी, या राहुल को खिलाया होगा यह कौन कह सकता है ? इतिहासकार ने तो केवल सिद्धार्थ के अवसाद की बात कह कर उन्हें महल के बाहर कर दिया । जाते समय उनके मन में कितना संघर्ष व कितना अन्तर्द्वन्द्व हुआ होगा इसका हिसाब क्या इतिहास के पास है ? सम्भवत: सिद्धार्थ एक दो बार सोती हुई यशोधरा को देखने लौटे हों । राहुल के निरीह मुख पर उन्होंने करुणा भरी दृष्टि डाली हो, परिचारिकाओं की गहरी नींद पर व्यंग्यभरी मुस्कान भरी हो, अपने पिता की चिन्ता पर गहरा विश्वास छोड़ा हो ? [1] डा.वर्मा एवं सभी विद्वान इस बात से सम्मत है कि जीवन के मनोविज्ञान पर दृष्टि डालने का अवकाश इतिहासकार के पास नहीं है ।

डा.वर्मा एवं ऐतिहासिक नाटक :--

ऐतिहासिक विषय चयन में नाटक व एकांकीकार का मुख्य ध्येय दर्शकों में भूतकाल का गौरव, गर्व व देश प्रेम की भावना का प्रचार व प्रसार करना रहता है । [2] इतिहास में स्वदेश की प्राचीन गौरव गाथा अंकित रहती है । जब नाटककार ऐसे गौरव पूर्ण स्थल रंगमंच पर प्रदर्शित करता है तब दर्शकों में स्वभावत: महानता, उत्कर्ष तथा अभ्युत्थान की भावना तीव्र रूप से जाग्रत हो जाती है । इसी कारण अंग्रेजी रंगमंच पर महारानी एलिजाबेथ के समय शेक्सपियर द्वारा रचित ऐतिहासिक नाटकों को मान्यता व

---

१. इतिहास के स्वर - भूमिका -- डा.रामकुमार वर्मा ।
२. नाटक की परख -- एस.पी. खत्री -- पृ सं. २५८

लोक-प्रियता प्राप्त हुई थी । फ्रान्सिसी रंगमंच पर नेपोलियन बोनापार्ट तथा लुई अष्टम के जीवन चरित्र से संबंधित नाटकों व एकांकियों को मान्यता प्राप्त हुई । भारतीय रंगमंच पर चन्द्रगुप्त ,अशोक तथा अन्य ऐतिहासिक चरित्रों से संबंधित नाटकों व एकांकियों की लोक-प्रियता प्राप्त हुई है । जब तक इतिहास जीवित रहेगा नाटककार उसके कोष से विषय चुनकर जनता को भूतकाल की गौरव गरिमा से प्रभाविन्वित करता रहेगा । इस तथ्य की हम उपेक्षा नहीं कर सकते कि जहां ऐतिहासिक नाटककार इतिहास के गौरवमय चरित्रों का अंकन करता है वहां उसका उद्देश्य उन ऐतिहासिक भूलों तथा कापुरुषों की अकर्मण्यता का दिग्दर्शन कराना भी होता है, जिनके कारण देश को तत्कालीन राजनीति में हानि का भागी होना पड़ा था । एक न्याय संगत नाटककार के लिए ऐसे पात्रों का यथार्थ चित्रण ही सम्मत है ।

नाटककारों के सम्मुख नाटक रचना के लिए विषय की इतनी प्रचुरता है कि कभी कठिनाई नहीं होती कि कौनसा विषय चुना जाय । उसके सम्मुख इतिहास पृष्ठ कोई उपस्थित रखता है । ऐतिहासिक विषयों में राजाओं की जीवनी, उनके महत्व पूर्ण कार्य कलाप, उनका पारिवारिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन नाटककार अपने नाटक में समेट सकता है । सामन्तों और राष्ट्रीय वीरों, नेताओं, सुधारकों,कवियों तथा सेनानायकों के महत्व पूर्ण कार्य कलापों को नाटकीय रूप नाटककार देकर उसे विशेष महत्ता प्रदान करने के साथ ही जन मानस की सुप्त भावनाओं को पुन: जागृत करता है ।

डा.वर्मा के ऐतिहासिक नाटकों की मुख्य विशेषता यह है कि " भारतीय इतिहास जिन पात्रों के सम्बन्ध में मौन रहा है या अपनी अभिव्यक्ति में स्पष्ट नहीं है उन पात्रों के स्पष्टीकरण में डा.वर्मा ने अभूतपूर्व कार्य किया है । [१] कौमुदी महोत्सव " जैसा पृष्ठ उनकी भूमिका चन्द्रगुप्त संबंधी अनेक भ्रांतियों का निराकरण करती है । इस

---

१. चार ऐतिहासिक एकांकी -- भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा ।

दिशा में इतिहास के अध्ययन के साथ ही उनके तत्कालीन सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि की भी तैयारी करनी पड़ी है । [1]

डा. वर्मा एवं संस्कृति :--

भारत वर्ष की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि इतनी सुदृढ एवं समृद्ध रही है कि कठिन से कठिन आपद्ग्रा काल में भी उसने अपने आत्म विश्वास व आशावादिता को नहीं खोया एवं दासत्व की श्रृंखलाओं में जकड़े रहने पर भी उसे स्वच्छन्द चेतना व आशा की किरणें अपनी ज्योति से आलोकित करती रही । इस देश की महानता व गौरवता का यही एक मात्र अमिट चिन्ह है । डा. वर्मा के नाटकों का भी यही एक मात्र अमिट संकेत है । यह संकेत ध्रुव नक्षत्र के भांति स्थिर रहेगा ऐसा उनका विश्वास है । [2]

वर्मा जी के ऐतिहासिक सभी के सभी एकांकी इतिहास की गौरवपूर्ण घटनाओं के आधार पर निर्मित हुए हैं । इनकी एकांकी नाटक देश के गौरव के साथ-साथ भारतीय संस्कृति के जीवंत चित्र भी प्रस्तुत करते हैं । इतिहास के पृष्ठों की ये अमर कहानियां केवल अतीत के जीवन पर प्रकाश ही नहीं डालती वरन अतीत को प्रकाश में लाती हुई वर्तमान को स्पर्श करती चलती हैं । इतिहास के आधार पर मानव मन की गुत्थियां सुलझाने में डा वर्मा सिद्धहस्त हैं । ऐतिहासिक नाटकों में उन्होंने मौलिक अनुसंधानवृत्ति का ऐसा ही परिचय दिया है ऐसा प्रतीत है । [3] डा. रामचरण महेन्द्र के मतानुसार भारतीय चरित्र की पृष्ठ भूमि पर चरित्रों के मनोविज्ञान को संवारने तथा कवित्वपूर्ण संवादों तथा कौतुहल की सृष्टि करने में वर्मा जी सिद्ध हस्त हैं ।

---

१ इतिहास के स्वर -- भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा

२. सेठ गोविन्ददास अभिनन्दन ग्रन्थ -- पृ. सं ३८६

(हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार लेखक - डा. कमलेश)

डा. वर्मा एवं आदर्शवाद :--

डा. वर्मा के ऐतिहासिक नाटकों में जो मूल प्रवृत्ति सामान्य रूप से पाई जाती है वह उनका नैतिक आदर्शवाद है । उन्होंने हिन्दू सम्राटों को भारतीय चरित्र का प्रतीक माना है तथा उनमें भारतीय संस्कारजन्य गुणों का दिग्दर्शन कराया है । वर्माजी के नाटकों में यथार्थवादी दृष्टिकोण का अवसान आदर्शवाद में हो जाता है तथा सौन्दर्यमयी रोचकता उनकी एकांकियों की विशेषता है ।[१] अपने आदर्शवाद में वर्मा जी अपने देश व संस्कृति के प्रतिनिधि ज्ञात होते हैं । यदि उनकी रचनाओं का अनुवाद विदेशी भाषा में हो तो पाठक पढ़कर अनायास ही कह उठेगा कि ' रामकुमार ' पूर्व का लेखक है ।

ऐसा प्रतीत होता है कि जो दृष्टिकोण स्वर्गीय प्रेमचन्द का उपन्यास क्षेत्र में था वही दृष्टिकोण वर्मा जी का एकांकी नाटकों के क्षेत्र में है । अन्तर यह है कि प्रेमचन्द ने ग्रामीणों के हृदय में प्रवेश कर उनके सरल व स्वाभाविक मनोवेगों का चित्रांकन भाषा की अत्यन्त प्रभाव शालिनी शैली से किया है जबकि वर्मा जी ने मुख्यत: शिक्षित व नागरिक जन समुदाय की परिस्थितियों एवं संघर्षशील भावनाओं में पैठ कर जीवन का चित्रण काव्य की सरस एवं शृंगारपूर्ण शैली में स्वाभाविक रूप में प्रस्तुत किया है । प्रेम-चन्द का चित्रण प्रकृत एवं जीवन के विभिन्न अंगों के ठोस निरीक्षण का परिणाम है तथा वर्मा जी का चित्रण जीवन से उद्भुत एक आध्यात्मिक दृष्टिकोण को लेकर कल्पना के सजीले रंगों के साथ उपस्थित किया गया है । प्रेमचन्द में जहां वास्तविकता की विपुल राशि कला भाग के अंग अंग में बिखरी हुई है वहां वर्मा जी के चित्रण में जीवन का जागता हुआ रूप कल्पना का सहारा लेकर संयत ढंग से एक निश्चित निष्कर्ष की ओर प्रेरित किया गया है ।

---

१. विमर्श एवं निष्कर्ष -- डा. सरनामसिंह -- पृ सं. १८८

आलोच्य एकांकी एवं नाटककार ने अपनी रचनाओं के माध्यम से ऐसे आदर्शवाद की प्रतिष्ठा की है जो जीवन की व्यवहारिकता से ओत-प्रोत होकर नैतिक दृष्टि से कल्याण व लोक मंगलकारी है। सांस्कृतिक दृष्टि से वे अपने क्षेत्र में प्रेमचन्द व प्रसाद के समकक्ष रखे जा सकते हैं क्योंकि उन्होंने भारतीय इतिहास के उन चरित्रों का विश्लेषण कर उनमें ऐसी प्राण प्रतिष्ठा की है जो ऐतिहासिकता से ओत-प्रोत होते हुए भी जीवन के स्पन्दन से सजीव है।

डा.वर्मा एवं यथार्थवाद :-

लोक-कथाओं तथा पौराणिक कथाओं को विषयाधार मानकर नाटक रचना का मुख्य उद्देश्य प्राचीन संस्कृति तथा प्राचीन सभ्यता की परिपाटी को जीवित रखना है। ऐतिहासिक नाटकों की यथार्थवादिता परखने की दो कसौटियां हैं, प्रथम नाटक जिस काल का है, उस काल के जीवन का उसमें कितना स्वाभाविक व यथार्थवादी चित्रण हुआ है। द्वितीय यह कि चित्रण से वर्तमान जन जीवन को क्या प्रेरणा प्राप्त होती है। ऐतिहासिक प्रसंगों के पुष्पों को शब्दों के तारों में पिरो कर माला तैयार करने वाला, किसी सच्चे चित्रकार की भांति साहित्य पृष्ठ पर अपनी लेखनी कूंची द्वारा सजीव बना देता है। इसी में लेखक की असाधारण लेखन कला का कौशल छिपा रहता है। भूत को वर्तमान में ढालना तथा पाठकों के मन में उसकी स्पष्ट प्रतिक्रिया उत्पन्न करना अत्यन्त कठिन काम है। ऐतिहासिक नाटक व एकांकीकार में यह शक्ति पुरुषार्थ द्वारा अविरत साधना के परिपाक स्वरूप पाई जाती है।

डा.वर्मा ने जीवन की यथार्थवादिता को साहित्य में चित्रित करने का प्रबल आग्रह किया है। उनका कथन है कि जीवन का अध्ययन मनन ही वस्तु स्थिति के स्पन्दन का अनुभव करा सकेगा। नाटककार को परिस्थिति की उड़ान कल्पना करने की आवश्यकता ही क्या है? हमारे जीवन के चारों ओर घटनाओं का अविराम प्रवाह चलता चलता

है। आवश्यकता इसकी है कि इन घटनाओं को सजीव दृष्टि से देखकर उनकी व्यंजना में कथावस्तु का निर्माण कर दिया जाय।[1] इससे स्पष्ट है कि डा. वर्मा नाटक की कथा-वस्तु को जीवन से ही लेकर उसे नाटकीय साँचे में ढालते हैं। उनका कथन है कि मैक्सिम गोर्की के साहित्य में जीवन को ही साहित्य व कला मान लिया गया है, उनकी कृतियों में जीवन की दुःखपूर्ण व वास्तविक घटनाओं का एक क्रमिक विकास मिलता है। चेखव में भी जीवन को जैसा का तैसा उठा कर रख देने की प्रवृत्ति है, परन्तु फिर भी उन्होंने कला की उपेक्षा नहीं की। टाल्सटाय ने अपने साहित्य में यथार्थ को आदर्शोन्मुख कर दिया है। हिन्दी के नाटककार ऐसे लेखकों का अन्धानुकरण केवल उनके सैद्धान्तिक पक्षों को ग्रहण कर रहे हैं जो जीवन को यथार्थ रूप में चित्रित करने में सफल पाती है। ऐसे लेखक अपने को प्रगतिशील कहते हैं। वर्मा जी ने ऐसे प्रगतिशील लेखकों से अपना मत भेद प्रकट किया है। उनकी मान्यता है कि यदि साहित्य की रचना प्रतिहिंसा के आधार पर होगी तो वह 'सत्य' व 'सौन्दर्य' से दूर 'शिव' के लिए घातक सिद्ध होगी। यही कारण है कि जीवन के यथातथ्य प्रत्यंकन से वर्माजी को असन्तोष है तथा साहित्य में कलात्मक परिष्कार उन्हें अभीष्ट है। संक्षेप में डा वर्मा न तो जीवन के यथा तथ्य चित्रण का अतिरेक चाहते हैं, न कला का उत्तम प्रसार। उनका विचार है कि नाटक-कार जीवन के अनुभवों को अपनी कूंची व लेखनी से सजीव करता है, अपने विवेक द्वारा उसमें व्यवस्था लाता है, तदनंतर ही एक सुन्दर कलाकृति का निर्माण होता है। रूपांतर तर से जीवनानुभूतियों एक नवीन रूप देने में कल्पना का सहयोग रहता है। परन्तु उत्तान कल्पना की विवेक द्वारा शासन में डा वर्मा की आस्था है।

---

१. रेशमी टाई -- भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा।

डा. वर्मा एवं जीवनाभिव्यक्ति :--

डा. वर्मा के अनुसार नाटक में जीवन की अभिव्यक्ति तीन प्रकार से हो सकती है। संस्कृति की व्याख्या, इतिहास व राष्ट्रीयता के प्रति आस्था, तथा जीवन की दैनिक समस्याओं का समाधान। संस्कृति की व्याख्या के लिए प्राचीन ~~कककं~~ महाकवियों के काव्य तथा नाटक, तथा उनसे संबंधित कथावस्तु डा. वर्मा की रचनाओं की प्रिय कथावस्तु रही है। ऐतिहासिक तथा राष्ट्रीय विषयों पर तो अनेक एकांकी लिखे जा चुके हैं, तथा दैनिक समस्याओं का चित्रण भी सम्प्रति एकांकी नाटकों में पर्याप्त हो रहा है। आलोच्य विषय का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है। वर्मा जी की एक स्पष्ट मान्यता है कि कथावस्तु एक अनुभूति अथवा एक संवेदना मात्र भी हो सकता है। यह कबीर द्वारा इंगित " घूंघट का पट " है जिसके खोलने पर राम मिल जाते हैं। यह तीव्र अनुभूति सत्य के यथार्थ तथा आदर्श को उसी प्रकार छिपाए रहती है, जैसे हंसी या आंसू जीवन के दु:ख या सुख के समस्त संसार को अपने में लीन किए रहते हैं। वर्मा जी की कथावस्तु की एक विशेषता यह है कि वे अपने संगठन में कल्पना को यथार्थ भूमि पर प्रकट करते हैं। जिससे वह सत्य के समान प्रतीत होकर हृदय पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है। यह कथावस्तु प्राय: ऐसी होती है जो हमारे जीवन से दूर भी न होते हुए, ऐतिहासिकता के आकुल में निमग्न, स्वाभाविकता में प्रविष्ट होकर गति प्रेरणा तथा शक्ति प्रदान करती है।

समीक्षक रामनाथ सुमन उनकी इसी विशिष्टता पर मुग्ध होकर कहते हैं, "रामकुमार जी की नाट्यकला में सुघर कल्पनाओं का एक जीवित लोक संचारित रहता है। वे मानवता के पक्ष को उपेक्षित भी नहीं करते, उसके भावुक अनुबन्धों की गुंडी खोल देते हैं। वे हृदय को छूते हैं और रस टपकने लगता है।" १

---

१. चारुमित्रा -- भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा।

इसके आगे वे कहते हैं " एक ओर जब रामकुमार की प्रखर वस्तुवादिता दृश्य विधान की सफल योजना में सहायक है तो दूसरी ओर कवि सिद्ध कोमलता उन्हें भौतिकवाद की नीरसता से बचाये हुए हैं । उनका प्रखर यथार्थ रूप भी ऐसा ही रूप लेकर हमारे सामने आता है कि हम उसकी ओर आकर्षित होने लगते हैं तथा वह हमारा आदर्श बन जाता है । इस आदर्श व यथार्थ की संधि में वर्मा जी की ललित कल्पना बड़ी सहायक हुई है ।" [१]

डा. वर्मा एवं कल्पना :--

ऐतिहासिक नाटक की रचना के समय नाटककार की स्थिति विषम हो जाती है, क्योंकि उसे एक सफल नाटक रचना के साथ इतिहास के युग विशेष का प्रभाव उत्पन्न करने के लिए ऐतिहासिक तथ्यों का आश्रय लेना पड़ता है । ऐतिहासिक नाटककार केवल इतिहासकार न होकर साहित्य स्रष्टा है । अतएव वह ऐतिहासिक सत्य में सौन्दर्य की सृष्टि के साथ उस सत्य को प्रखर बनाने के लिए कल्पना का पुट देता है जो सोने में सुहागा " लोकोक्ति को चरितार्थ करती है । [२]

डा. वर्मा के नाटकों में कल्पना का प्रयोग उतना ही हुआ है जहां तक सत्य का रूप विकृत न होने पाये । जीवन की समस्या तथा चरित्रों का मनोविज्ञान दो किनारे हैं । जिनमें होकर उनके नाटकों की कथावस्तु प्रवाहित हुई है । उनके नाटकों में कोई भी प्रसंग ऐसा नहीं मिलेगा जो अस्वाभाविक व असत्य हो । [३] स्वयं डा. वर्मा का कथन है कि उन्होंने अपने नाटकोंमें कल्पनाका प्रयोग पच्चीस प्रतिशत व ऐतिहासिक तथ्योंका प्रयोग पचहत्तर प्रतिशत किया है । [४]

---

१. चारुमित्रा -- भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा ।
२. देखिए - प्रिंसीपल आफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म । आई. ए. रिचर्डस
३. पांचजन्य भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा -- ।
४. डा. वर्मा से व्यक्तिगत रूप से ज्ञात ।

डा.वर्मा एवं एकांकी नाटक रचना प्रक्रिया :--

डा.वर्मा की प्रतिभा सम्पूर्ण नाटकों की अपेक्षा एकांकी नाटक रचना की ओर ही अधिक रही है । इसका एक कारण यह है कि वे समाज व जीवन के मौलिक सत्यों को प्राण पर की अनुभूति में दीप्त कर पाठक या दर्शक के समक्ष इस भांति प्रस्तुत कर जाय तथा निखर । अर्थ कृपण होने के साथ-साथ आज सामाजिक समय कृपण हो गया है परन्तु उसकी व्यस्त जीवन चर्या होते हुए उसकी संस्कार जन्य मान्यताएं इतिहास के परिशीलन की ओर उन्मुख करती हैं । वर्मा जी ने व्यक्ति तथा सामाजिक की इसी दुर्बल प्रवृत्ति को दृष्टिगत रखते हुए समयानुकूल नाट्य रचनाएं प्रस्तुत करने की चेष्टा की है । जिसमें वे पूर्णतया सफल हुए हैं ।

समाज के अधिकांश जनमानसों की अभिव्यक्ति लोकमंगल की दृष्टि से की जाती है । लोककल्याण का लक्ष्य रखने वाले नाटकों में ऐतिहासिक नाटकों की महत्ता स्पष्ट है । अतीत के स्वर्णिम पृष्ठों को पढने की इच्छा, वर्तमान से असंतुष्ट होकर अतीत के प्रति मोह, एवं अतीत व वर्तमान की तुलना करने का स्वभाव समाज को ऐतिहासिक नाटक पढने को बाध्य करता है ।

पात्र :--

डा.वर्मा ने प्राचीन ऐतिहासिक घटनाओं को लेकर ऐतिहासिक पात्रों में नव-जीवन तथा उसी आवेगमय स्फूर्ति का संचार किया है जो तत्कालीन प्रत्यक्ष घटनाओं में रही होगी । उन्होंने न केवल अपने ऐतिहासिक पात्रों को अनुसन्धानात्मक प्रवृत्ति के आधार पर प्रस्तुत किया है, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति, दृष्टिकोण तथा परिस्थिति को स्पष्ट करते हुए पूर्ण तर्क सम्मत तथ्यों को निरोपित किया है । अपने पात्रों तथा ऐति-

---

१. हिन्दी एकांकी एवं एकांकीकार -- डा.रामचरण महेन्द्र -- पृ सं. १०४

हासिक पृष्ठ भूमि की प्रामाणिकता में डा वर्मा अंग्रेजी के सर वाल्टर स्काट के समक्ष आ खड़े होते हैं । [१] इनके एकांकियों में इतिहास हँसता है, दण्ड देता है, खिलता है, तथा बोलता है अपना जीवन पुन: एक बार जीता है ।

कथावस्तु :--

आलोच्य एकांकीकार ने एकांकी नाट्य विधान में ग्राह्य कथावस्तु का स्वरूप निर्धारित किया है । अनुबंधिक इतिवृत्तों का वहां एकांत अभाव है । इस संबंध में उनका प्रामाणिक मत एक उल्लेखनीय है, एकांकी में एक घटना है और वह नाटकीय कौशल से ही कौतूहल का संचय करती हुई चरम सीमा तक पहुंचती है । उसमें कोई अप्रधान प्रसंग नहीं रहता - - - - - विस्तार के अभाव में प्रत्येक घटना कली की भांति खिल कर पुष्प की भांति विकसित होती है । उसमें लता की भांति फैलने की उच्छृंखलता नहीं । [२] इस प्रकार वर्मा जी के अनुसार एक ही घटना विस्तार के साथ मुखरित होती हुई चरम सीमा में परिणित होती है ।

चरम सीमा व कौतूहल को समेटे हुए कथा सूत्र में आद्यंत अन्विति होनी चाहिए अथवा कथा की एक रूपता खण्डित होकर अपने सम्पूर्ण प्रभाव को खो बैठेगी । आलोच्य एकांकीकार के अनुसार घटनाओं व एकांकी नाटकों में प्रस्तुत की गई समस्याओं में तादात्म्य होना चाहिए । घटनाओं व समस्याओं के पारस्परिक अंतर्व्यापी नैकट्य को दूर कर जीवन की पृष्ठभूमि पर प्रत्येक घटना व समस्या का स्वाभाविक उभार प्रस्तुत करना एकांकी का कौशल है । [३] एकांकी की कथावस्तु जटिल व उलझी हुई न होकर सीधी व संक्षिप्त हो तथा प्रासंगिक इतिवृत्तों का उसमें एकांत अभाव भी यही आलोच्य एकांकीकार की इच्छा रहती है ।

---

१. हिन्दी एकांकी एवं एकांकीकार -- डा. रामचरण महेन्द्र -- पृ. सं. १०४

२. रेशमी टाई -- भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा ।

३ वही भूमिका।

कौतूहल :--

घटना को चरम सीमा तक पहुंचाने के लिए कौतूहल आवश्यक है । इस कौतूहल का अर्धांश ही दर्शकों के सम्मुख प्रकट रहता है शेष गुप्त, " जैसे यह सागर में तैरता हुआ बर्फ का पहाड़ है जो जहाज़ में बैठे हुए व्यक्तियों को कपास का एक पिण्ड प्रतीत होता है । जब जहाज़ उससे टकरा कर चूर चूर हो जाता है तब उसकी विशालता का अनुभव होता है । घटना की सम्पूर्ण व्यंजना भी तब प्रकट होती है जब घटना की चरम सीमा से टकरा कर भावना खण्ड खण्ड हो जाती है । [1] कौतूहल के द्वारा दर्शक आदि से अंत तक आगामी घटना चक्र के लिए विस्मय से भरे फिसलते अंत में आ गिरते हैं । यहीं पर एकांकी का अंत सम्भव है । संक्षेप में वर्माजी कौतूहल की चरम सीमा तक कौतूहल का अंत एक साथ ही करने में एकांकी का कौशल मानते हैं ।

चरम सीमा :--

चरम सीमा को वर्मा जी एकांकी के लिए अनिवार्य मानते हैं । इसी तत्व ने संस्कृत के एकांकी नाटकों व आधुनिक हिन्दी एकांकी में अन्तर की रेखा स्पष्ट कर दी है । वास्तविकता यह है कि चरम सीमा का विधान हमारे यहां पश्चिम से आया है । वर्मा जी चरम सीमा पर एकांकी नाटक की समाप्ति चाहते हैं । उनका मत है कि चरम सीमा के बाद घटना का विस्तार वैसा ही अपकिार है जैसे प्रेयसी से बातें करने के बाद आटे-दाल का हिसाब करना ।[2] लक्ष्य का निरूपण चरम सीमा में ही जाकर होता है। तथा इस लक्ष्य का निरूपण हो चुकने के बाद कथा वस्तु को आगे खींचना वैसा ही है जैसा जाड़े में सिनेमा देखकर पैदल घर लौटना ।" [3]

---

1. सरस एकांकी नाटक -- भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा
2. रेशमी टाई -- भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा
3. अनुराग -- भूमिका -- ,, ,,

संवाद :--

वर्मा जी का मत है कि संवादों के द्वारा एकांकी के पात्रों के स्वभाव तथा आवेगों का स्पष्टीकरण होता है । साथ ही कथोपकथन उतने हो जितने से पात्रों की क्रिया प्रतिक्रिया स्पष्ट होती है ।[1] मनोरंजन या सिद्धान्त प्रतिपादन के लिए कथोपकथन की सृष्टि करना उन्हें अभीष्ट नहीं । इससे नाटक में अस्वाभाविकता आती है । और फिर तो नाटककार पात्रों के कण्ठ में कोयल या कौआ बन कर बोलने लगता है । कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक भावाभिव्यक्त करने वाली भाषा पाठकों को अधिक प्रभावित कर सकती है । यह स्वाभाविकता तब और बढ़ जाती है, जब पात्रों के संवाद, स्थिति, आयु बुद्धि तथा घटना के अनुसार रखे गये हों । आलोच्य एकांकीकार न केवल संवाद प्रत्युत चरित्र चित्रण और भाषा की क्या वरन् सम्पूर्ण नाटक की स्वाभाविकता पर बल देते हैं, उससे ही सम्पूर्ण प्रभाव उत्पन्न होना सम्भव है । पात्रों के चरित्र चित्रण और उनकी गतिविधियां, वार्तालाप, वेशभूषा आदि सभी स्वाभाविक हों ।

चरित्र-चित्रण :--

पात्रों के चरित्र चित्रण के संबंध में वर्मा जी बहुत सजग रहते हैं । पात्रों के संस्कारों पर जब परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है तो वे अपना विकास करने लगते हैं । यदि प्रभाव संस्कार के अनुकूल होता है तो पात्र उचित या अनुचित दिशा में सरलता से विकास करने लगता है । यदि वह संस्कार के प्रतिकूल पड़ता है तो पात्र में अंतर्द्वन्द्व या संघर्ष आरम्भ हो जाता है । संस्कार या प्रभाव के उचित सामंजस्य में चरित्र चित्रण का सौन्दर्य है । जब यह सौन्दर्य अभिनय कला के सांचे में ढलता है तो रंगमंच पर सच्चे जीवन का अवतरण होता है ।[2]

---

१. अनुराग -- भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा
२. दीपदान - ,, ,, ,,

ऐतिहासिक पात्रों के चरित्र चित्रण में स्वाभाविकता लाने के लिए वे प्रायः एक सूची उन संभावनाओं की बनाते हैं जो उन पात्रों के राजनैतिक ,सामाजिक या सांस्कृतिक क्षेत्रों में हो सकती हैं । कोई पात्र किस गुण के कारण किस दिशा में कहां तक जा सकता है , उसकी चारित्रिक विशेषताएं या दुर्गुण देखते हुए उससे क्या क्या आशाएं की जा सकती हैं ? इन सब संभावनाओं की गणना सम्पत्ति की सूची में की जाती है । इन गुणों को सक्रिय बनाने के निमित्त गौण चरित्रों की आवश्यकता होती है जो प्रमुख पात्रों की विशेषताओं अथवा दुर्बलताओं को उभार देते हैं । उदाहरणार्थ स्वर्ण श्री में देवला, नागदत्त तथा बृहद्रथ, पुष्यमित्र के चरित्र को उभारते हैं । ये गौण पात्र एक अन्य दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण हैं वह यह कि ये पात्र ऐतिहासिक घटनाओं के रिक्त अंशों को सांस्कृतिकता के सहारे जोड़ते एवं शृंखलाबद्ध करते चलते हैं । वास्तव में इन्हीं के कारण घटनाएं मनोरंजक, स्वाभाविक तथा सुसंगठित बनती हैं ।

चरित्र चित्रण के लिए वर्मा जी मनोविज्ञान को आवश्यक समझते हैं । जीवन की उलझी समस्याएं तथा मनोविज्ञान दो किनारे हैं जिनमें होकर उनके नाटकों की कथावस्तु प्रसारित तथा प्रवाहित होती है । मनोविज्ञान के द्वारा चरित्र चित्रण का उत्कर्ष विधायक रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है तथा पात्रों के अभिनय को अनुप्राणित किया जा सकता है । परन्तु डा. वर्मा मनोविज्ञान के अतिरेकी प्रसार के विरोधी हैं । उनका विचार है कि मनोविज्ञान के प्रभावातिरेक से एकांकी नाटक की कलात्मकता ह्रासोन्मुख होती है तथा दर्शकों की मानसिक सुविधा का विनाश कर अपना प्रभाव स्वयं समाप्त कर देती है । इस लिए वे यूजीन, ओनील, हेराल्ड तथा राबिस्टीन जैसे नाटककारों से असन्तुष्ट हैं, जो सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक प्रयोगों से दर्शकों में एक विभ्रममय भय उत्पन्न कर देते हैं । डा. वर्मा रंगमंच के वातावरण से परिस्थिति का आभास या संकेत देना पसन्द करते हैं तथा इस क्षेत्र में वे बेल्जियम के मैटरलिंक के रूप को श्लाघ्य मानते हैं ।

संकलनत्रय :--

डा. वर्मा नाटक एवं एकांकियों में प्रभावान्विति उत्पन्न करने के लिए संकलन-त्रय को आवश्यक मानते हैं। मेरी दृष्टि में संकलनत्रय का महत्वपूर्ण स्थान है। एक संपूर्ण कार्य, एक स्थान पर, एक ही समय में हो जाना मैं एकांकी के लिए अनिवार्य समझता हूं।[१] उनके अनुसार एकांकी नाटकों में वृहत नाटकों की अपेक्षा इसका निर्वाह सरल है। अत: एकांकी में इसका निर्वाह होना ही चाहिए। अत: जो लेखक इस कौशल का प्रयोग नहीं करते वे एकांकी की दृष्टि से कला के प्रति विश्वास नहीं रखते।[२]

एकांकी में प्रथम स्थान पात्र और उसके मनोविज्ञान का है। दूसरा स्थान संभाषण या कथोपकथन, तीसरा स्थान चरम सीमा या क्लाईमेक्स का, चौथा स्थान घटना का है।[३] डा. वर्मा का बहु सम्मत विचार है कि संवादों में स्वाभाविकता तथा कथा में गति देने की शक्ति होनी चाहिए। केवल हास्य या मनोरंजन के लिए देर तक पात्रों का उलझे रहना युक्ति संगत नहीं। संभवत: इसी कारण डा. वर्मा को आस्कर वाईल्ड के नाट्य शिल्प के प्रति असन्तोष है। संभाषण का महत्व प्रतिपादित करते हुए वे कहते हैं, इसमें वार्तालाप से घटनाओं के गूढ से गूढ बारीकों अवरोधों का ज्ञान होना चाहिए। शब्दों में ध्वनि या व्यंजना हो और हमारे भावों में सुख या दु:ख का सम्पूर्ण मनोविज्ञान।[४] इस क्षेत्र में वर्मा जी जार्ज बर्नार्ड शा तथा आयरिश नाटककार जे. एम. सिंज के प्रशंसक हैं।

---

१. सरस एकांकी नाटक -- भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा।
२. दीपदान ,, ,, ,,
३. ऋतुराज ,, ,, ,,
४ रेशमी टाई ,, ,, ,,

उद्देश्य :--

वर्मा जी के एकांकियों अथवा नाटकों का उद्देश्य संस्कृत नाटकों के समान नीति या आदर्श प्रस्तुत करना नहीं है । एकांकी का क्षेत्र इस सम्बन्ध में अत्यन्त सीमित है । वह तो जीवन की रेखाओं में रंग भर कर घटना या पात्रों के माध्यम से एक विशिष्ट संवेदना पर उंगली रखना चाहता है । वह संवेदना इतिहास, राष्ट्र, परिवार, धर्म, समाज किसी भी क्षेत्र की हो सकती है । जीवन के साधारण से साधारण धरातल पर उतर कर वह सत्य को छेड़ देती है और जीवन के विस्तृत आकाश में विद्युत बन कर समा जाती है । वर्मा जी एकांकी की संक्षिप्त मानते हुए उसके उद्देश्य को महान मानते हैं ।

एकांकी का उद्देश्य सर्व सामान्य के मन में साहित्य के प्रति अनुराग उत्पन्न करना है तथा जीवन का वास्तविक मूल्यांकन करते हुए उसको साहित्य में उचित स्थान पर आसीन करना है । एकांकी की महत्ता प्रतिपादित करते हुए वर्माजी कहते हैं, आज के व्यस्त जीवन के बीच कम से कम समय में अधिक से अधिक मनोरंजन का उत्तरदायित्व इसने अपने ऊपर ले लिया है । साथ ही आज के जीवन में अनेक समस्याएं हैं, जो एक ही स्थान पर गिरे हुए पतंग के डोरे की भांति उलझी हुई हैं । उन्हें गहरी दृष्टि से देखकर सतर्क उंगलियों से सुलझाने की कुशलता एकांकी में है । इस लिए वे एकांकी को काम का कुशल धनु कहना चाहते हैं जिसके प्रयोग से समस्त विश्व की समस्याएं वश में की जा सकती हैं । इसी कारण एकांकी को जीवन के किसी अंग की संक्षिप्त किन्तु भूमती हुई समस्या कहते हैं ।

हास्य एवं व्यंग्य :--

एकांकी नाटकों में हास्य व्यंग्य तथा विनोद की योजना सबसे अधिक डा. वर्मा ने की है । उनके गंभीर से गंभीर एकांकियों में हास्य का यह किंचित प्रवेश दिखाई देता है । उनके एकांकी व नाट्य साहित्य में परिस्थितियों का सन्तुलन बिगड़ने पर या

विरोधी या परिस्थितियों में समझौता कराने की चपल वृत्ति में ही हास्य पानी के बुलबुले की भांति सतह पर आ जाता है । [१] उन्होंने अपनी रचनाओं में हास्य का समावेश करने की पूर्वी तथा पश्चिमी हास्य शैलियों का समन्वय स्थापित कर अपनी मौलिकता प्रदर्शित की है । उनका मत है कि पाश्चात्य साहित्य में हास्य ने मनोविज्ञान का आश्रय लेकर अनेक रूप धारण किये हैं , जिनमें विकृति, अतिरंजना, परिहास, व्यंग्य और वचन वैदग्ध्य प्रमुख हैं । डा. वर्मा की इस प्रवृत्ति का एक मुख्य कारण उनका स्वयं का हास्य व्यंग प्रधान होना है । वे अपने व्यक्तिगत जीवन में भी विनोद प्रिय है । तुरन्त बुद्धि उत्तर देना तथा चुटकियां लेना उनकी विशेषता है ।

रंगमंच :--

वर्मा जी स्वयं अभिनेता रह चुके हैं । अत: वे रंगमंच संबंधी कठिनाइयों से भलीभांति परिचित हैं । इस कारण वे अपने एकांकी नाटकों में रंगमंच संबंधी निर्देश पूर्णतया देते हैं । इसी संदर्भ में वे कहते हैं" मैं समझता हूं कि रंगमंच पर नाटकों की सृष्टि उस समय तक नहीं हो सकती जब तक अभिनय की कला साहित्य की कला का पथ निर्देशन करें । [२] उनका मत है कि अभिनय की कला प्रमुख संवेदना के उभार के लिए परिस्थितियों को स्वयं चुन लेती है । परिस्थितियों के इस चुनाव से कथावस्तु का विस्तार तो कम होगा ही साथ ही अनावश्यक प्रसंगों का भी निराकरण हो जायेगा । वर्माजी का मत है कि प्रसाद के चन्द्रगुप्त ` नाटक की अभिनयशीलता का प्रमुख कारण उनका छोटी छोटी घटनाओं को महत्व देना है । अभिनयशीलता के विषय

---

१. ऋतुराज -- भूमिका -- डा. रामकुमार वर्मा ।

२ जूही के फूल ,, ,,

३ दीपदान ,, ,,

में वर्मा जी का मत है कि पात्र के अभिनय से यह प्रतीत न हो कि वह अभिनय कर रहा है। स्थिति ऐसी हो कि रंगमंच पर इस प्रकार कार्य करें कि कोई उसे देख नहीं रहा। दर्शक जैसे पात्र को न जानते हों, वे जैसे किसी छिद्र से उसका कार्य कलाप देख रहे हैं। [१]

इस प्रकार नाटक व एकांकी सम्बन्धी वर्मा जी की मान्यताओं का प्रतिपादन कर हम सहज इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उनके विचार प्रामाणिक, निष्कर्ष ठोस एवं कठोर हैं। उनके एकांकी नाटकों में उनके द्वारा प्रतिपादित एकांकी नाट्य विधान के सिद्धान्त-अपवाद रहित स्थिति में मिलते हैं। प्रौढ एवं सुदृढ साहित्यिक मान्यताओं पर ही उनकी एकांकी कला उत्कर्ष प्राप्त कर सकी है। उनके मौलिक सिद्धान्तों का स्थायी रूप है। उनकी मान्यताएं भावी एकांकीकारों का मार्ग प्रशस्त करेंगी। तथा नाट्य कला का आलोक उनका पथ प्रशस्त करेगा।

---

१. दीपदान -- भूमिका --- डा. रामकुमार वर्मा।